हिन्दी

भाषा की संघर्ष यात्रा और हिन्दू-इतर रचनाकार

डॉ. संध्या सिलावट

डॉ. संध्या सिलावट द्वारा कृत 'हिन्दी भाषा की संघर्ष यात्रा और हिन्दू-इतर रचनाकार' की समीक्षा

भाषाई राष्ट्रवाद और डॉ. संध्या सिलावट: एक गंभीर अध्ययन

- डॉ. सुरेश कुमार मिश्रा ‘उरतृप्त’

https://hi.wikipedia.org/s/1ptf

डॉ. संध्या सिलावट की कृति 'हिन्दी भाषा की संघर्ष यात्रा और हिन्दू-इतर रचनाकार' हिंदी साहित्य के आकाश में एक उष्णकिरण के समान चमकती है, जो भाषा के समावेशी, बहुलतावादी स्वरूप को प्रदीप्त करती हुई हिंदी को उसके वास्तविक वैभव में प्रतिष्ठित कर देती है। यह पुस्तक मात्र आलोचना एवं इतिहास विधा का अनुपम उदाहरण नहीं, अपितु भारत की सांस्कृतिक धारा का जीवंत प्रतिबिंब है, जिसमें हिंदू धर्म से इतर रचनाकारों – बौद्ध, जैन, मुस्लिम, सिख एवं ईसाई – के योगदान को अत्यंत मनोहारी, शोधपूर्ण एवं उदाहरणोत्कृष्ट ढंग से संनादित किया गया है, जिससे पाठक का हृदय गर्व एवं आनंद से उछल पड़ता है। लेखिका ने भूमिका में स्वयं स्पष्ट किया है कि भारत सदा जाति, मजहब एवं क्षेत्रीय सीमाओं को लाँघकर सभ्यता का विस्तार करने वाला देश रहा है, जहाँ पाणिनि, पतंजलि एवं कात्यायन जैसे प्राचीन व्याकरणाचार्यों के ग्रंथों (लगभग ५०० ईसा पूर्व से पूर्व) में प्राकृत, पाली एवं अपभ्रंश भाषाओं का प्रामाणिक उल्लेख प्राप्त होता है, जो क्रमशः अपभ्रंश से होकर खड़ी बोली हिंदवी के रूप में विकसित हुई। फारसी, अरबी, उर्दू एवं अन्य भाषाओं के विद्वान, शायर, लेखक, आलोचक एवं समाज-सुधारकों ने हिंदी को अपनी शब्दावली, व्याकरणिक लचीलापन एवं अलंकारों से समृद्ध किया, भाषा एवं बोलियों की सीमाओं को ध्वस्त कर इसे लोक-व्यापी एवं विश्वव्यापी बनाया। प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग द्वारा ३३० पृष्ठों में प्रकाशित यह

ग्रंथ केवल ६१५ रुपये का है, किंतु इसका सांस्कृतिक एवं साहित्यिक मूल्य अनगणित है। डॉ. सिलावट, जो हिंदी एवं अंग्रेजी में स्नातकोत्तर हैं तथा मध्य प्रदेश राज्य कर विभाग में उपायुक्त के पद पर आसीन हैं, ने अपनी सतत लेखन साधना से हिंदी को एक नया क्षितिज प्रदान किया है। सात अध्यायों की क्रमबद्ध एवं कालक्रमानुसार संरचना – बौद्ध से ईसाई तक – हिंदी की संघर्षपूर्ण, परिवर्तनशील यात्रा को इतने प्रवाहमय ढंग से चित्रित करती है कि प्रत्येक पृष्ठ उदाहरणों से ओतप्रोत होकर भाषा के नदी प्रवाह को जीवंत कर देता है। यह कृति हिंदी प्रेमियों, शोधकर्ताओं एवं साहित्य प्रेमियों के लिए अमृततुल्य ग्रंथ है, जो हमें 'हिंदी हैं हम, वतन है हिंदुस्तान हमारा' के भाव से ओजपूर्ण बनाती है, तथा हिंदी दिवस पर विशेष रूप से प्रासंगिक होकर भाषा की समृद्धि को दिन-प्रतिदिन वृद्धि प्रदान करती है।

हिंदी भाषा का प्राचीन एवं ऐतिहासिक विकास संस्कृत व्याकरण की कठोर परंपरा से आरंभ होता है, किंतु डॉ. सिलावट ने इस कृति में निर्विवाद रूप से प्रमाणित किया है कि प्राकृत, पाली एवं अपभ्रंश काल से ही गैर-हिंदू रचनाकारों का प्रभाव हिंदी की जड़ों में गहराई तक प्रतिबद्ध एवं संनादित है। पाणिनि की 'अष्टाध्यायी', पतंजलि का 'महाभाष्य' एवं कात्यायन के सूत्र (५०० ई.पू. से बहुत पूर्व) में अपभ्रंश भाषाओं का स्पष्ट उल्लेख है, जो कालक्रमानुसार विकसित होकर दसवीं शताब्दी के आसपास खड़ी बोली हिंदवी के रूप में प्रकट हुई, जिसमें सभी वर्गों ने योगदान दिया। लेखिका ने भारत पर तुर्की-मुगल आक्रमणों के संदर्भ में विस्तारपूर्वक दर्शाया है कि हिंदी ने फारसी, अरबी एवं तुर्की शब्दों को सहज भाव से आत्मसात कर अपनी लचीलापन एवं अनुकूलन क्षमता सिद्ध की, फारसी-अरबी लिपि अपनाई किंतु देवनागरी की मूल आत्मा को

अक्षुण्ण रखा। उत्तर भारत में कबीर, रैदास एवं नानक के दोहे गुरु-शिष्य परंपरा से राजस्थान से बंगाल तक एवं दक्षिण तक देशव्यापी फैले, जबकि दक्षिण भारत में क्षेत्रीय बोलियाँ एवं लोकगीत हिंदी को पुष्ट एवं विविधतापूर्ण बनाते रहे। आधुनिक काल में भारतेंदु हरिश्चंद्र, द्विवेदी युग एवं छायावाद ने हिंदी को परिष्कृत एवं सौंदर्यपूर्ण बनाया, जबकि ग्रियर्सन जैसे ब्रिटिश भाषाविदों की हिंदी को सीमाबद्ध करने की चेष्टाएँ हिंदी की लोक-व्यापकता के समक्ष विफल रहीं। पुस्तक ने धर्मग्रंथों के साथ उत्तर एवं दक्षिण भारत की लेखन परंपराओं की सूक्ष्म तुलना की है, अमीर खुसरो एवं जायसी जैसे नामों से सूफी-भक्ति समन्वय का जीवंत चित्रण किया है। डॉ. सिलावट की शोध-दृष्टि एवं विश्लेषणात्मक क्षमता इतनी तीक्ष्ण एवं मनोहारी है कि पाठक हिंदी को एक संघर्षशील, परिवर्तनशील एवं जीवंत सांस्कृतिक संगठन के रूप में अनुभव करता है – जो लोक-हृदय में रची-बसी, साहित्य-सभ्यता से संनादित एवं आक्रमणों के बावजूद अटल बनी रही। यह प्रथम खंड भाषा निर्माण की सूक्ष्म प्रक्रिया को उदाहरणों से स्पष्ट करता है।

पुस्तक का प्रथम अध्याय बौद्ध धर्म के रचनाकारों पर पूर्णतः केन्द्रित है, जो हिंदी साहित्य की प्रारंभिक नींव में बौद्ध दर्शन के अमिट, गहन एवं आध्यात्मिक प्रभाव को उजागर करता है, पाठक को प्राचीन विहारों की शांति एवं करुणा से ओतप्रोत कर देता है। सरहपा एवं शबरपा जैसे आठवीं शताब्दी के महान सिद्ध कवि हिंदी की लोक-भाषाई धारा के प्रथम प्रणेता एवं आधारस्तंभ बने, उनके पदों एवं दोहों में दुखवाद, शून्यवाद एवं करुणा की गहन आध्यात्मिकता झलकती है – जैसे सरहपा का 'महामुद्रा गीत' जो हिंदी को आंतरिक शांति एवं निर्विकल्प ज्ञान की गहराई प्रदान करता है। नौवीं शताब्दी के स्वयंभू एवं भूस्कोप ने अपभ्रंश से हिंदी की ओर दृढ़ सेतु रच दिया, उनके ग्रंथों में

बौद्ध नैतिकता एवं लोक-रस का अनुपम समन्वय है। लेखिका ने इन रचनाकारों के पद-अंशों को उद्धृत कर भाषा के प्रारंभिक प्रवाह को अत्यंत जीवंत बना दिया है, तथा दिखाया है कि बौद्ध विचारधारा हिंदी में पूर्णतः आत्मसात होकर आधुनिक काल में महादेवी वर्मा के 'नीहार' एवं 'यामा', सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' के 'राम की शक्ति पूजा' एवं 'तोड़ती पत्थर' में प्रतिबिंबित हुई, जहाँ करुणा एवं संघर्ष प्रधान भाव है। ग्यारहवीं शताब्दी के अब्दुल रहमान जैसे नाम प्रारंभिक हिंदी सृजन में सहभागी बने। डॉ. सिलावट ने प्रत्येक उदाहरण को इतने सूक्ष्म एवं काव्यात्मक ढंग से विवेचित किया है कि पाठक स्वयं बौद्ध विहारों में विराजमान अनुभव करता है। आधुनिक हिंदी में अज्ञेय की 'असाध्य वीणा', नागार्जुन एवं राहुल सांकृत्यायन के बौद्ध-प्रभावित कार्य इसकी निरंतरता सिद्ध करते हैं। यह अध्याय निर्विवाद रूप से प्रमाणित करता है कि हिंदी बौद्ध दर्शन से समृद्ध एवं उदार हुई, दलित एवं स्त्रीवादी साहित्य में भी भेदभाव-विरोध का बौद्ध सन्नाद स्पष्ट है। लेखिका की विवेचन शैली मनोरम एवं ओतप्रोत है, प्रत्येक वाक्य काव्यांश समान प्रतीत होता है। बौद्ध योगदान ने हिंदी को करुणामयी, शांत एवं विश्वव्यापी आभा प्रदान की।

द्वितीय अध्याय जैन धर्म के रचनाकारों के अपार योगदान को पूर्ण रूप से समर्पित है, जो प्राकृत एवं अपभ्रंश से हिंदी साहित्य तक का अनुपम, दृढ़ एवं नैतिकतापूर्ण सेतु रचते हैं, हिंदी को अहिंसा एवं अपरिग्रह के आभूषणों से अलंकृत करते हैं। बारहवीं शताब्दी के हेमचंद्राचार्य एवं हरिभद्रसूरि ने रामकथा पर २५० से अधिक जैन संस्करण रचे, जिनमें घटनाक्रम के स्थान पर अहिंसा, त्याग एवं कर्म-सिद्धांत प्रधान रहा – हेमचंद्र का 'त्रिषष्टि-शलाका-पुरुष चरित्र' एवं 'कौसल्यभूषण' हिंदी रास-शैली एवं कथा-रूप के

आधारस्तंभ बने। नौवीं शताब्दी के स्वयंभू का अपभ्रंश ग्रंथ 'पउमचरिउ' ने हिंदी को प्रथम रामकाव्य प्रदान किया, जो लोक-रसास्वादन एवं अलंकारों से समृद्ध है। लेखिका ने इन ग्रंथों के विशद अंश उद्धृत कर जैन साहित्य के हिंदी पर प्रभाव को स्पष्ट किया है, जिसमें रस, छंद एवं नैतिक उपदेशों का अनुपम संयोग है। जैन आचार्यों ने हिंदी को दक्षिणी बोलियों से उत्तर तक फैलाया, रामकथा को त्याग-प्रधान एवं करुणा-ओतप्रोत बनाकर लोकप्रिय किया। डॉ. सिलावट की सूक्ष्म एवं शोधपूर्ण विवेचना इतनी मनोहारी है कि पाठक जैन तीर्थंकरों के विमलों एवं समवसरणों की आध्यात्मिक यात्रा पर प्रतीत होता है, भाषा के क्रमिक परिवर्तन एवं शब्द-संनाद को चित्रित करती हुई। जैन साहित्य ने हिंदी को काव्यशास्त्र, अलंकार एवं रासो विधा की समृद्धि प्रदान की, जो प्रेमचंद से लेकर आधुनिक लेखकों तक निरंतर है। यह अध्याय हिंदी की सहिष्णुता, विविधता एवं नैतिक गहराई सिद्ध करता है, जैन योगदान को हिंदी की आत्मा का अभिन्न अंग बनाता है। लेखिका ने इतिहास को काव्य एवं दर्शन का संगम बना दिया है।

तृतीय अध्याय ज्ञातकालीन मुस्लिम रचनाकारों पर प्रकाश डालता है, जिन्होंने फारसी-हिंदी समन्वय से भाषा को वैभवपूर्ण, मधुर एवं सूफीमय स्वरूप प्रदान किया, हिंदी को दरबारी एवं लोक दोनों स्तरों पर प्रतिष्ठित किया। अमीर खुसरो, 'तूती-ए-हिंद' एवं 'हिंद के सिकंदर' के रूप में खड़ी बोली के प्रथम महान कवि, ने ब्रज-हिंदवी में पहेलियाँ, मुकरियाँ एवं रहस्यगीत रचे – जैसे प्रसिद्ध "चन्दा मामा दूर के, पोंड़े चाँदनी रानी, झोपड़े में रहियो गोरी, हम तो आएँगे बारम्बार" – जो सूफी प्रेम एवं लोक-सौंदर्य का अनुपम समन्वय है। मलिक मुहम्मद जायसी की 'पद्मावत' अवधी हिंदी का उत्कृष्टतम काव्य है, जिसमें भक्ति-सूफी संगम, प्रेम-त्याग एवं आध्यात्मिकता प्रधान है। लेखिका

ने इन रचनाओं के विशद अंश उद्धृत कर हिंदी की लचीलापन एवं आत्मसात करने की क्षमता दिखाई है, जो तुर्की-मुगल आक्रमणों के बावजूद अटल रही। खुसरो ने लोकधुनों को दरबारी साहित्य में उतारा, कबीर-सूर भक्ति धारा के लिए मार्ग प्रशस्त किया। डॉ. सिलावट ने इतिहास को अत्यंत जीवंत एवं प्रवाहमय ढंग से चित्रित किया है, पाठक को खुसरो के दिल्ली दरबार एवं जायसी के सुफी आश्रम में पहुँचा देता है। यह अध्याय मुस्लिम रचनाकारों को हिंदी का अभिन्न, अमिट अंग बताता है, उर्दू-हिंदी विवाद को समाप्त करता हुआ। पद्मावत का वीर-प्रेम दर्शन आज भी हिंदी साहित्य की धुरी है। लेखिका की शैली इतनी ओजपूर्ण एवं काव्यात्मक है कि प्रत्येक वाक्य हृदयस्पर्शी लगता है।

चतुर्थ अध्याय अज्ञातकालीन मुस्लिम रचनाकारों को समर्पित है, जिनका काल निर्धारित न होने पर भी हिंदी साहित्य पर प्रभाव अमिट एवं गहन है, भाषा को फारसी-अरबी शब्दावली से समृद्ध किया। बब्बर, कनकमुनि एवं अन्य ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी के नाम हिंदी के प्रारंभिक सृजन एवं लोक-काव्य में सहभागी बने, उनके पदों में सूफी भक्ति एवं हिंदी लोक-रस का संनाद है। लेखिका ने इनके उपलब्ध पदों एवं ग्रंथ-अंशों को उद्धृत कर दिखाया है कि तुर्की आक्रमणों के बाद भी हिंदी लोक में जीवित रही, फारसी लिपि में लिखी गई किंतु खड़ी बोली का स्वरूप अक्षुण्ण रहा। ये रचनाकार हिंदी की आत्मसात करने की अद्भुत क्षमता के प्रतीक हैं, विदेशी शब्दों को सहज रूप से हिंदी में घोलकर भाषा को वैश्विक बनाया। डॉ. सिलावट ने इतिहास के इन अंधेरे कोनों को रोशन किया है, शोधपूर्ण ढंग से अज्ञात नामों को सम्मान प्रदान किया, पाठक को आश्चर्य एवं गर्व से भर देता है। यह अध्याय हिंदी को लोकतांत्रिक एवं समावेशी

सिद्ध करता है, जहाँ अज्ञात रचनाकार भी अमर हैं। लेखिका की खोजपूर्ण दृष्टि एवं विवेचना प्रशंसनीय है।

पंचम अध्याय दक्षिणी हिंदी साहित्य में मुस्लिम रचनाकारों के योगदान को समर्पित है, जो हिंदी भाषा को उत्तर तथा दक्षिण भारत की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक सीमाओं से पूर्णतः मुक्त कर एक राष्ट्रीय एवं एकीकृत स्वरूप प्रदान करता है, पाठक को हिंदी की अखंडता एवं विविधतापूर्ण वैभव से परिचित कराते हुए हृदय में गौरव का संचार करता है। दक्षिण भारत में तेलुगु, कन्नड़, तमिल एवं मलयालम जैसी क्षेत्रीय बोलियों के माध्यम से हिंदी का प्रसार मुस्लिम सूफी कवियों एवं संतों के गीतों, पदों तथा लोक-काव्यों द्वारा हुआ, जिनमें प्रेम, भक्ति, एकता एवं मानवतावाद के उदात्त भावों का अनुपम समन्वय विद्यमान है, जो हिंदी को दक्षिण की मधुर संगीतमय परंपरा से संनादित करते हैं। लेखिका डॉ. संध्या सिलावट ने इस अध्याय में दक्षिणी सूफी परंपराओं के विशद एवं शोधपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत किए हैं, जैसे दक्कन के सूफी दरगाहों से जुड़े कवियों के हिंदी-मिश्रित गीत, जो उत्तर भारतीय भक्ति धारा के कबीर, सूर एवं तुलसी से संनादित होकर हिंदी को एक अखंड सांस्कृतिक धारा बनाते हैं – उदाहरणस्वरूप, दक्षिणी मुस्लिम रचनाकारों द्वारा रचित 'प्रेम मार्ग' पर आधारित पद, जो वीर रस एवं श्रृंगार रस का संगम दर्शाते हैं। इन रचनाकारों ने हिंदी को दक्षिणी लोक-संगीत एवं राग-रागिनियों से समृद्ध किया, जिससे भाषा का स्वरूप और भी मधुर एवं लयबद्ध हो गया, तथा हिंदी का दक्षिणी रूप उत्तर की खड़ी बोली से पृथक् होते हुए भी एकता का प्रतीक बन गया। डॉ. सिलावट की विवेचना इतनी सूक्ष्म, प्रवाहमयी एवं उदाहरणोत्कृष्ट है कि पाठक स्वयं को दक्कन के सूफी संगीत एवं मंदिरों की सांस्कृतिक यात्रा पर अनुभव

करता है, भाषा के क्षेत्रीय परिवर्तन एवं शब्द-संनाद को अत्यंत जीवंत ढंग से चित्रित करती हुई। यह अध्याय हिंदी की विविधता, सहिष्णुता एवं भौगोलिक विस्तार को उजागर करता है, मुस्लिम योगदान को हिंदी की आत्मा का अभिन्न अंग बनाते हुए यह सिद्ध करता है कि हिंदी कभी किसी क्षेत्र की बपौती नहीं रही। लेखिका ने दक्षिणी ग्रंथों के अंश उद्धृत कर भाषा के लचीलापन एवं आत्मसात करने की क्षमता को प्रमाणित किया है, जो पाठक को गद्गद एवं आनंदित कर देता है। यह अध्याय पुस्तक का हृदयस्थल है, जो हिंदी को राष्ट्र-भाषा बनाने में दक्षिणी योगदान को अमर बनाता है।

षष्ठ अध्याय सिख धर्म के रचनाकारों के अपार एवं आध्यात्मिक योगदान पर केन्द्रित है, जो हिंदी साहित्य की भक्ति धारा को अत्यंत मजबूत, लोक-आध्यात्मिक एवं एकेश्वरवादी स्वरूप प्रदान करते हैं, पाठक के हृदय में भक्ति एवं समानता के भावों को जागृत कर हिंदी के प्रति गौरवान्वित भाव उत्पन्न करते हैं। गुरु नानक देव जी के दार्शनिक विचारों एवं उद्धरणों का प्रभाव हिंदी साहित्य में प्रारंभिक काल से ही विद्यमान रहा, उनके 'जपुजी साहिब' एवं लोक-भाषा में रचे गये दोहे हिंदी को एकेश्वरवाद, सामाजिक समानता, जाति-भेद उन्मूलन एवं मानवतावाद से ओतप्रोत करते हैं, जो कबीर, रैदास एवं अन्य निर्गुण भक्ति कवियों के कार्यों में प्रतिबिंबित होते हैं। लेखिका ने सिख संतों एवं गुरुओं के हिंदी में रचे गये पदों, वार्तालापों एवं ग्रंथ-अंशों को उद्धृत कर दिखाया है कि सिख धर्म ने हिंदी को पंजाबी, ब्रज एवं अवधी बोलियों के माध्यम से समृद्ध किया, 'आदि ग्रंथ' के हिंदी पद हिंदी साहित्य का अभिन्न अंग बने। सिख रचनाकारों ने हिंदी को भक्ति मार्ग के साथ-साथ वीर रस एवं राग-आधारित काव्य प्रदान किया, जो गुरुद्वारों के कीर्तन एवं लोक-परंपराओं से देशव्यापी फैला। डॉ. सिलावट ने इन योगदानों को

इतने शोधपूर्ण, काव्यात्मक एवं प्रवाहमय ढंग से विवेचित किया है कि पाठक स्वयं को गुरु नानक के संगत एवं गुरुद्वारों की भक्ति-मय वातावरण में उपस्थित अनुभव करता है, भाषा के आध्यात्मिक परिवर्तन एवं शब्द-चयन को सूक्ष्मता से चित्रित करती हुई। कबीरपंथ एवं अन्य सिख प्रभावित परंपराओं ने इन रचनाओं को राजस्थान से पूर्वी भारत तक पहुँचाया, हिंदी को एकता एवं अखंडता का प्रतीक बनाया। यह अध्याय सिख योगदान को हिंदी की आत्मा का शाश्वत हिस्सा बताता है, जो आधुनिक हिंदी में भी निरंतर प्रासंगिक है। लेखिका की शैली हृदयस्पर्शी एवं ओजपूर्ण है, प्रत्येक उदाहरण भक्ति रस से ओतप्रोत। यह अध्याय हिंदी को सिख दर्शन की उदारता एवं करुणा से अलंकृत सिद्ध करता है।

सप्तम अध्याय ईसाई रचनाकारों के हिंदी साहित्य एवं भाषा विकास पर प्रभाव को अत्यंत सूक्ष्म एवं शोधपूर्ण ढंग से चित्रित करता है, जो हिंदी को आधुनिक काल में परिष्कृत, वैश्विक एवं अनुवाद-प्रधान स्वरूप प्रदान करते हैं, पाठक को हिंदी की असीम उदारता एवं आत्मसात करने की क्षमता से गद्गद कर देते हैं। ईसाई मिशनरियों एवं विद्वानों ने अंग्रेजी काल में हिंदी ग्रंथों का अनुवाद, बाइबिल के हिंदी रूपांतरण एवं भाषा-शुद्धिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जिनके कार्यों ने हिंदी को पश्चिमी विचारधारा, वैज्ञानिक शब्दावली एवं गद्य-शैली से समृद्ध किया – उदाहरणस्वरूप, विलियम कैरी एवं अन्य मिशनरियों द्वारा रचित हिंदी बाइबिल एवं धार्मिक ग्रंथ, जो खड़ी बोली को मानक रूप प्रदान करते हैं। लेखिका ने इन रचनाकारों के ग्रंथ-अंश उद्धृत कर दिखाया है कि ईसाई प्रभाव ने हिंदी को ईसाई प्रेम, क्षमा एवं सेवा के आदर्शों से ओतप्रोत किया, जो प्रेमचंद, जैनेंद्र एवं अन्य आधुनिक लेखकों के उपन्यासों में प्रतिबिंबित हुआ। डॉ.

सिलावट ने ईसाई हिंदी साहित्य की शैलीगत विशेषताओं – सरल गद्य, उपदेशात्मकता एवं भावुकता – को विशद विवेचना के साथ प्रस्तुत किया है, जो हिंदी को औपनिवेशिक काल में जीवित रखा। यह अध्याय हिंदी की वैश्विकता एवं लचीलापन सिद्ध करता है, ईसाई योगदान को भाषा के आधुनिकीकरण का आधार बताता है। लेखिका की विवेचना इतनी मनोहारी है कि पाठक ईसाई गिरजाघरों एवं मिशनरी विद्यालयों की सांस्कृतिक यात्रा करता है। यह अध्याय पुस्तक का समापन बिंदु है, जो हिंदी को सर्वधर्म समभाव का प्रतीक बनाता है।

पुस्तक पूरे ग्रंथ में भाषा विकास की प्रक्रिया को उदाहरणों से अत्यंत स्पष्ट एवं जीवंत ढंग से प्रस्तुत करती है, जो अपभ्रंश से खड़ी बोली तक शब्दावली, व्याकरण एवं अलंकारों के क्रमिक परिवर्तन को सूक्ष्मता से उकेरती है, पाठक को भाषा के संघर्षपूर्ण प्रवाह का प्रत्यक्ष अनुभव कराती है। लेखिका ने प्रत्येक अध्याय में प्राचीन पदों से आधुनिक गद्य तक शब्द-परिवर्तन के उदाहरण दिए हैं – जैसे फारसी 'इश्क' का हिंदी 'प्रेम' में रूपांतरण, व्याकरणिक लचीलापन एवं छंद-परिवर्तन। मुगल-ब्रिटिश काल में हिंदी की लोक-व्यापकता पर जोर देते हुए ग्रियर्सन जैसे भाषाविदों की चेष्टाओं का उल्लेख किया है। डॉ. सिलावट ने भाषा को नदी के समान चित्रित किया है। यह खंड भाषा को जीवंत संगठन बनाता है।

पुस्तक पूरे ग्रंथ में भाषा विकास की प्रक्रिया को उदाहरणों से अत्यंत स्पष्ट, जीवंत एवं प्रवाहमय ढंग से प्रस्तुत करती है, जो अपभ्रंश काल से खड़ी बोली तक शब्दावली, व्याकरण, अलंकारों एवं छंदों के क्रमिक परिवर्तन को सूक्ष्मता से उकेरती हुई पाठक को

भाषा के संघर्षपूर्ण एवं सृजनात्मक प्रवाह का प्रत्यक्ष, हृदयस्पर्शी अनुभव कराती है, मानो हिंदी स्वयं एक जीवंत नदी हो जो विभिन्न सहायक नदियों को ग्रहण कर विशाल समुद्र बन रही हो। लेखिका डॉ. संध्या सिलावट ने प्रत्येक अध्याय में प्राचीन पदों, दोहों एवं ग्रंथ-अंशों से आधुनिक गद्य एवं काव्य तक शब्द-परिवर्तन के विशद उदाहरण दिए हैं – जैसे फारसी 'इश्क' का सहज हिंदी 'प्रेम' में रूपांतरण, अरबी 'किताब' का 'पुस्तक' में समन्वय, व्याकरणिक लचीलापन जहाँ कठोर संस्कृत सूत्र अपभ्रंश की सरलता में विलीन हो जाते हैं, तथा छंद-परिवर्तन से दोहा-चौपाई का उदय। मुगल काल में हिंदी की लोक-व्यापकता पर विशेष जोर देते हुए लेखिका ने ग्रियर्सन जैसे ब्रिटिश भाषाविदों की हिंदी को उर्दू में विलीन करने की विफल चेष्टाओं का प्रामाणिक उल्लेख किया है, जो प्रमाणित करता है कि हिंदी लोक-हृदय में रची-बसी होने से आक्रमणों एवं औपनिवेशिक दबावों से अटल रही। डॉ. सिलावट ने भाषा को एक सजीव, संघर्षशील संगठन के रूप में चित्रित किया है, जहाँ शब्दों की सीमाएँ टूटना, बोलियों का संनाद एवं व्याकरण का लोक-परिवर्तन प्रत्येक पृष्ठ पर उदाहरणों से प्रदीप्त है – जैसे सरहपा के बौद्ध पदों से खुसरो की मुकरियों तक रस-परिवर्तन। यह समग्र विवेचना इतनी शोधपूर्ण एवं काव्यात्मक है कि पाठक भाषा के प्रत्येक मोड़ पर उपस्थित अनुभव करता है, हिंदी के निर्माण को एक महाकाव्य के समान ग्रहण करता है। पुस्तक भाषा को नदी के समान बहते हुए दर्शाती है, जो बौद्ध करुणा, जैन अहिंसा, सूफी प्रेम एवं सिख एकता को आत्मसात कर वैश्विक हो जाती है। यह खंड हिंदी के वैभव को अनन्य रूप से जीवंत बनाता है, पाठक को गद्गद एवं प्रेरित कर देता है।

लोक परंपरा ने हिंदी भाषा को सदा पुष्ट, अमर एवं जन-जन तक पहुँचदार बनाए रखा है, गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से दोहे, पद एवं लोकगीत देश के एक छोर से दूसरे छोर तक, राजस्थान की वीर भूमि से बंगाल की साहित्यिक धरती तक एवं दक्षिण की संगीतमय घाटियों तक अक्षुण्ण रूप में फैलाए, हिंदी को सांस्कृतिक एकता का प्रतीक बना दिया, जो आधुनिक युग में भी प्रासंगिक है। कबीरपंथ, रैदास सम्प्रदाय एवं नानक पंथ जैसे माध्यमों ने इन रचनाओं को लोकप्रिय बनाया, जहाँ कबीर के 'माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर', रैदास के भक्ति-पद एवं गुरु नानक के जपुजी उद्धरण गुरु-शिष्य संवाद से पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होते रहे, हिंदी को धर्म-सीमाओं से परे जनवाणी बनाते हुए। लेखिका ने भारतेंदु युग एवं द्विवेदी युग को इस परंपरा से जोड़ा है, जहाँ भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 'हिंदी है हम वतन है हिंदुस्तान हमारा' जैसे उद्घोष से लोक-भाव को साहित्यिक ऊँचाई दी, जबकि द्विवेदी ने भाषा-शुद्धिकरण के साथ लोक-रस को संरक्षित किया। डॉ. सिलावट ने लोक-दोहों के विशद उदाहरण दिए हैं – जैसे मुस्लिम लोककवियों के सूफी गीत एवं जैन नैतिक कथाएँ – जो प्रमाणित करते हैं कि हिंदी की जन-जड़ें गैर-हिंदू योगदान से पुष्ट हैं। यह विवेचना इतनी हृदयस्पर्शी एवं शोधपूर्ण है कि पाठक लोक-पर्वतों, मेले-ठेलों एवं गुरुद्वारों की यात्रा करता है, हिंदी को जन-हृदय की अमर धड़कन अनुभव करता है। लोक परंपरा ने आक्रमणों एवं परिवर्तनों में हिंदी को अटल रखा, क्योंकि यह साहित्य-सभ्यता से संनादित थी। लेखिका ने इन जड़ों को मजबूत कर हिंदी को शाश्वत सिद्ध किया है, पाठक को गौरवान्वित एवं भावविभोर कर देता है। यह खंड हिंदी की लोकतांत्रिक आत्मा को उजागर करता है।

डॉ. संध्या सिलावट की यह कृति अत्यंत शोधपूर्ण, उदाहरणपूर्ण, प्रवाहपूर्ण एवं काव्यात्मक है, जो हिंदी साहित्य के इतिहास को नया आयाम प्रदान करती हुई प्रत्येक पाठक को गद्गद एवं प्रेरित कर देती है, मानो हिंदी स्वयं लेखिका की कलम से बोल उठी हो। भाषा का प्रवाह नदी के समान सहज, ओजपूर्ण एवं अनिरंतर है, जहाँ प्राचीन अपभ्रंश पदों से आधुनिक गद्य तक का संक्रमण इतने मनोहारी ढंग से बुना गया है कि पाठक प्रत्येक वाक्य में भाषा के सृजन को साक्षात् अनुभव करता है। यह पुस्तक हिंदी दिवस एवं हिंदी पखवाड़ा पर अत्यंत प्रासंगिक है, क्योंकि यह भाषा की समृद्धि को दिन-प्रतिदिन वृद्धि प्रदान करने का आह्वान करती है, 'हर दिवस हिंदी दिवस' का भाव जागृत करती है। लेखिका की लेखनी अमर एवं ओजस्विनी है, जो मध्य प्रदेश की उपायुक्त होते हुए भी साहित्य साधना में लीन रही, हिंदी-अंग्रेजी के स्नातकोत्तर ज्ञान से ग्रंथ को वैश्विक दृष्टि प्रदान की। डॉ. सिलावट ने सात अध्यायों में क्रमबद्ध ढंग से बौद्ध से ईसाई तक योगदान को उद्धरणों से सजाया, इतिहास को काव्य बना दिया। यह कृति शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों एवं साहित्य प्रेमियों के लिए अनमोल निधि है, जो हिंदी को धर्म-निरपेक्ष एवं समावेशी सिद्ध करती है। लेखिका को हार्दिक नमन, जिनकी कलम ने हिंदी को गौरवान्वित किया। यह समीक्षा पाठक को पुस्तक खरीदने एवं अपनाने का संकल्प दिलाती है। प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग का धन्यवाद। कुल मिलाकर, यह ग्रंथ हिंदी साहित्य का स्वर्णिम अध्याय है।

यह पुस्तक हिंदी को पूर्णतः धर्म-निरपेक्ष एवं समावेशी सिद्ध करती है, अल्पसंख्यक समुदायों – बौद्ध, जैन, मुस्लिम, सिख एवं ईसाई – के योगदान से समृद्ध कर 'हिंदी हैं हम, वतन है हिंदुस्तान हमारा' की भावना को हृदय में जागृत करती है,

पाठक को गर्व एवं एकता से ओतप्रोत कर देती है। लेखिका ने स्पष्ट किया है कि हिंदी कभी किसी धर्म, जाति या क्षेत्र की बपौती नहीं रही; फारसी विद्वानों से लेकर ईसाई मिशनरियों तक सभी ने इसे शब्द, व्याकरण एवं रस से अलंकृत किया। यह सांस्कृतिक महत्व अमिट है, क्योंकि भारत की बहुलतावादी धारा को प्रतिबिंबित करती हुई हिंदी को वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठित करती है। डॉ. सिलावट ने उदाहरणों से दिखाया कि कबीर के निर्गुण पदों में सूफी प्रभाव, जैन रामकथाओं में नैतिकता एवं सिख दोहों में एकता हिंदी की आत्मा हैं। यह ग्रंथ वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिक है, जहाँ भाषा-विवादों के बीच समन्वय का संदेश देता है। सांस्कृतिक महत्व इतना गहन है कि पाठक हिंदी को मानवता की साझा विरासत अनुभव करता है। लेखिका की दृष्टि दूरदर्शी है। यह पुस्तक साहित्य जगत का अमर रत्न है।

यह कृति पाठकों को असीम गौरवान्वित एवं भावविभोर करती है, हिंदी को वैश्विक भाषा बनाने का संकल्प जागृत करती हुई डॉ. संध्या सिलावट को हार्दिक नमन प्रदान करती है, जो हिंदी साहित्य का चिरस्मरणीय रत्न बन गई है। यह अमूल्य ग्रंथ पाठक के हृदय-पट पर हिंदी के वैभवपूर्ण चित्र उकेरता है, प्रत्येक शब्द में भाषा की संघर्षपूर्ण यात्रा का ओजस्वी संनाद करता हुआ आत्मा को स्पर्श कर देता है, मानो हिंदी स्वयं पाठक के सम्मुख प्रकट होकर अपनी अमर गाथा का गुणगान कर रही हो। लेखिका ने गैर-हिंदू रचनाकारों – सरहपा से खुसरो, हेमचंद्र से नानक, जायसी से ईसाई मिशनरियों तक – के योगदान को इतने मनोहारी, शोधपूर्ण एवं उदाहरणोत्कृष्ट ढंग से संनादित किया है कि पाठक न केवल गर्व से पुलकित हो उठता है, अपितु हिंदी को अपनाने, समृद्ध करने एवं वैश्विक मंच पर प्रतिष्ठित करने का दृढ़ संकल्प ग्रहण कर लेता है। डॉ. सिलावट की

कलम ने हिंदी को नई पहचान प्रदान की है – एक ऐसी भाषा जो जाति-धर्म की सीमाओं से अतीत होकर मानवता की साझा विरासत बन चुकी है, जो बौद्ध करुणा, जैन अहिंसा, सूफी प्रेम, सिख एकता एवं ईसाई सेवा-भाव को आत्मसात कर विश्व-व्यापी हुई। यह ग्रंथ हिंदी प्रेमियों का अनन्य पथप्रदर्शक है, शोधकर्ताओं का खजाना, विद्यार्थियों का पाठ्यक्रम एवं साहित्य-साधकों का अमृत। प्रत्येक अध्याय पाठक को प्राचीन विहारों, जैन तीर्थों, सूफी दरगाहों, गुरुद्वारों एवं मिशनरी विद्यालयों की सांस्कृतिक यात्रा पर ले जाता है, भाषा के प्रवाह को नदी की भाँति बहाते हुए। डॉ. सिलावट को अनंत नमन, जिनकी साधना ने हिंदी को गौरवान्वित किया, मध्य प्रदेश की उच्च अधिकारी होते हुए भी साहित्य के प्रति समर्पण से ओतप्रोत रहीं। यह पुस्तक अमर रहेगी, हिंदी को चिरस्मरणीय ऊँचाइयों पर ले जाएगी। पाठक इसे अवश्य ग्रहण करें, क्योंकि यह न केवल ज्ञान का स्रोत है, अपितु हृदय का आनंद एवं आत्मा का उत्थान भी। 'हिंदी हैं हम, वतन है हिंदुस्तान हमारा' – यह भावना इस कृति से साकार हो जाती है।

---समाप्त---